इकाई 13 औचित्य सम्प्रदाय : अवधारणा एवं स्वरूप

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 औचित्य का अर्थ एवं स्वरूप

13.3 औचित्य का प्रयोजन

13.4 औचित्य के भेद

13.5 सहृदय की अवधारणा और औचित्य विवेचन

13.6 औचित्य विवेचन की समस्याएँ

13.7 पाश्चात्य चिंतन के आलोक में औचित्य विवेचन

13.8 सारांश

13.9 अवधारणात्मक शब्द

13.10 उपयोगी पुस्तकें

13.11 बोध प्रश्न

13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- औचित्य के अर्थ तथा स्वरूप को समझ सकेंगे,
- औचित्य के प्रयोजन को समझ सकेंगे,
- औचित्य के भेदों से परिचित हो सकेंगे,
- औचित्य की समस्याओं को समझ सकेंगे, और
- पाश्चात्य चिंतन के संदर्भ में औचित्य संबंधी विवेचन से परिचित होंगे।

13.1 प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति का मुख्य तत्व पुरुषार्थ चतुष्ट्य (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) है। दृष्ट से अदृष्ट की ओर उन्मुख करना ही हमारी संस्कृति का मुख्य सिद्धांत है। उसी के फलस्वरूप अर्थ और काम पुरुषार्थ हमें धर्म की ओर प्रेरित करके अप्रत्यक्ष रूप से मोक्ष के पद तक पहुँचा देते हैं। ललित कलाओं का भी सम्बन्ध पुरुषार्थ से है। अतः कला भी हमें प्रतिक्षण दृष्ट से अदृष्ट की ओर ले जाती है।

BHDC-106.indd 165 19-03-2021 08:51:38

काव्य कला का प्रधान अंग है जो रसास्वादन करता हुआ ब्रह्मानानंद का ज्ञान कराता है, उसमें औचित्य का विद्यमान रहना आवश्यक है।

संसारी लोक व्यवहार किस प्रकार का होना चाहिए, ये सभी बातें औचित्य के अंतर्गत आती है। औचित्यपूर्ण व्यवहार की ही भांति औचित्य पूर्ण काव्य भी सहृदय जनों के मानस को आनंदित करने योग्य बन जाता है।

सभी काव्यशास्त्र के आचार्यों ने अपने-अपने ढंग से रस, अलंकार आदि के उचित प्रयोग का विवेचन करते हुए औचित्य का संकेत दे दिया था, तथापि शुद्ध रूप से औचित्य को काव्य का तत्व मानकर और काव्य की कसौटी मानकार यदि किसी ने विचार किया तो आचार्य क्षेमेन्द्र ने। उन्होंने 'औचित्यविचार चर्चा' नामक ग्रंथ की रचना की। उन्होंने औचित्य की परिभाषा दी –

'उचितं प्राहुराचार्या सदृशं किल यस्य यत्
उचितस्य च यौ भावस्तदौचित्यं प्रचक्षते।'

इसकी व्याख्या करते समय लिखते हैं–

'यत्किल यस्यानुरूपं तदुचितमुच्यते, तस्य भावमौचित्यं कथयन्ति'

अर्थात जो वस्तु निश्चयात्मक रूप से जिसके अनुरूप होती है, उसको उचित कहते हैं और उचित के भाव को ही आचार्यजन औचित्य कहते हैं।

13.2 औचित्य का अर्थ एवं स्वरूप

आचार्य क्षेमेन्द्र ने बताया है कि यदि कोई अपने गले में मेखला पहन लें, हाथों में बिछुए बांध ले, पैरों में केयूर बाँध लें, इस औचित्य पर कौन नहीं हँस देगा।

अतः औचित्य के बिना न तो कोई समझ ही अच्छी लगती है और न गुण ही। औचित्य काव्य का अन्तरंग तत्व है। इसके बिना अन्य कोई गुण या विशेषता महत्वहीन हो जाती है।

औचित्य संप्रदाय आचार्य क्षेमेन्द्र द्वारा ईसा की 11वीं शती में विकसित हुआ। औचित्य विचार चर्चा के अतिरिक्त कवि कंठाभरण, सुवृत तिलक क्षेमेन्द्र की रचनाएँ हैं। क्षेमेन्द्र के अनुसार 'औचित्य ही काव्य की आत्मा है।'

औचित्य को लेकर तीन प्रमुख आचार्यों के नाम स्मरणीय हैं– भरत, आनन्दवर्धन तथा क्षेमेन्द्र। औचित्य का प्रथम बीज भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में मिलता है। नाटक के प्रसंग में इन्होंने औचित्य की चर्चा की है। यद्यपि इन्होंने औचित्य शब्द का नामोल्लेख नहीं किया परंतु नाटक के परमतत्व रस का वर्णन औचित्य की दृष्टि से किया, जिसके लिए उन्होंने अनुरूपता (सामंजस्य) अनुकूलता शब्द का प्रयोग किया है।

क्षेमेन्द्र की मान्यता है कि औचित्य रसानुभूति में चमत्कार उत्पन्न करने वाला रस का जीवन है। औचित्य काव्य का प्राण है। इनसे पूर्व आचार्य आनन्दवर्धन ने छः प्रकार के औचित्यों की चर्चा की है–

'रसौचित्य' अलंकारौचित्य, गुणौचित्य, संघटनौचित्य, प्रबन्धौचित्य और रीत्यौचित्य। उन्होंने रस की अभिवयंजना के निमित्त औचित्य का उपनिबन्धन आवश्यक है। उन्होंने

BHDC-106.indd 166 19-03-2021 08:51:38

औचित्य की तुलना में ध्वनि को ही महत्व दिया। आचार्य क्षेमेन्द्र ने औचित्य को रस का मूल आधार मानते हुए उसे ही सर्वाधिक महत्व दिया है।

क्षेमेन्द्र ने किसी एक तत्व को महत्व न देकर सभी तत्वों के संतुलन, सामंजस्य या संगति पर बल देकर काव्य-चिंतन को व्यापक संदर्भ प्रदान किया है। औचित्य पर बल देकर क्षेमेन्द्र ने काव्य को जीवन मूल्यों के निकट ला दिया है। औचित्य जीवन को भी सुंदर और सामंजस्यपूर्ण बनाता है। सामाजिक मर्यादा की प्रतिष्ठा का आधार औचित्य ही है। अनौचित्य की स्थिति सामाजिक मर्यादा के भंग होने से उत्पन्न होती है। इस प्रकार क्षेमेन्द्र ने काव्य को सामाजिक मूल्य एवं मर्यादा के संदर्भ में देखने की नई दृष्टि दी।

काव्यशास्त्र में औचित्य की प्रतिष्ठा से एक बहुत बड़े अभाव की पूर्ति हुई । क्षेमेन्द्र ने यह स्पष्ट किया कि केवल अलंकार और रीति का प्रयोग काव्य के सौन्दर्य को बढ़ाने में सहायता तो देता ही नहीं, अपितु उसे ठेस भी पहुँचा सकता है।

यदि हम छठी शताब्दी से लेकर गयारहवीं शताब्दी तक की संस्कृत रचनाओं को देखें तो ज्ञात होता है कि इस युग का साहित्य किस प्रकार कृत्रिम अलंकार-योजना से आच्छादित होकर सौन्दर्यविहीन, शुष्क एवं जटिल हो गया था। औचित्यवाद ने इसका घोर बहिष्कार करके परवर्ती युग की काव्य रचनाओं को भले ही वे संस्कृत भाषा की न होकर अन्य भाषा की हो– नया दृष्टिकोण प्रदान किया।

क्षेमेन्द्र का औचित्य सम्बन्धी दृष्टिकोण आज भी संदर्भवान है। आधुनिक युग का साहित्यकार साहित्य को नियमों से सर्वथा मुक्त कर देने में उसकी स्वाभाविकता मानता है वहाँ क्षेमेन्द्र आवश्यक नियमों का पालन करते हुए यथार्थ चित्रण में स्वाभाविकता मानते हैं। उस युग का पाठक या सामाजिक प्राचीन नियमों को श्रद्धा की दृष्टि से देखता था, अतः उनका पालन उस युग के साहित्यकार के लिए अपेक्षित था, जबकि आज का दृष्टिकोण बदल गया है।

औचित्य से काव्य के मूल सौन्दर्य की रक्षा होती है, उसके अभाव में सौन्दर्य-सौन्दर्य नही रहता – कुरूपता में परिणत हो सकता है किन्तु वह मूल सौन्दर्य का स्थापन्न नहीं बन सकता। अतःयह काव्य की आत्मा के पद पर आसीन नहीं हो सकता। औचित्य में अपने-आप में इतनी सामर्थ्य नहीं कि वह काव्य-सौन्दर्य की सृष्टि कर सकें।

यह सत्य है कि कई बार औचित्य या स्वाभाविकता के कारण कोई उक्ति सुन्दर बन जाती है, किन्तु वहाँ पर औचित्य के साथ अन्य तत्व भी सम्मिलित होते हैं। भावना शून्य होने पर एक स्वाभाविक वर्णन ही होते हैं। भावना शून्य होने पर एक स्वाभाविक वर्णन भी दंडी द्वारा कथित 'वार्ता' मात्र रह जाएगा, उसे काव्य की संज्ञा नहीं प्रदान की जा सकेगी।

अतः औचित्य वह तत्व है जो कविता-कामिनी के मुख चंद्र को निखारकर निष्कलंक तो बनाता है, किन्तु उसे ज्योत्स्ना का नया वैभव प्रदान करना उसके वश की बात नहीं है।

बिहारी के शब्दों में– 'वह चितवनि औरे कछू'
जिहि बस होत सुजान'।

भारतीय काव्य में औचित्य का विशिष्ट योग है। अनुचित अलंकार प्रयोग, अनुचित रीति, अनुचित उक्ति, अनुचित अर्थ तथा रस में अनुचित वर्णन– इन सबका सौष्ठव नष्ट कर देते है। अतः इन सभी सिद्धान्तों में औचित्य का समावेश आवश्यक है। औचित्य के अभाव में यह सभी व्यर्थ है, अतः औचित्य सम्प्रदाय उचित समन्वय का सन्देश लेकर उपस्थित हुआ। आचार्य क्षेमेन्द्र ने इस अतिसूक्ष्म तत्व के रूप में प्रतिष्ठित किया–

'महाकवेरप्यतिसूक्ष्मतत्व–विचार–हर्ष–प्रदमेतदुक्तम्'

(*सुवृत विलकम्*, 3/39)

अतः औचित्य काव्य का अन्तरंग तत्व है। इसके बिना अन्य कोई गुण या विशेषता महत्वहीन हो जाती है। इसी औचित्य तत्व की अवहेलना करने पर केशवदास की 'रामचन्द्रिका' की प्रकृति वर्णन तीखी आलोचना की गई तथा केशव को हृदयहीन कवि कहा गया।

साथ ही आचार्य क्षेमेन्द्र ने कहा कि जो जिसके योग्य हो, आचार्य लोग जिसे उचित कहते हैं साथ ही जिसका भाव भी उचित हो, वह औचित्य के अन्तर्गत आता है।

डॉ. मनोहर गौड़ ने इसे स्पष्ट करते हुए कहा– 'काव्य में भी संयोजन क्रिया की प्रमुखता रहती है। कल्पना का यही कार्य होता है। जीवन में अनेकत्र, अनेकदा दृष्ट एवं अनुभूत पदार्थों का किसी भाव या कथा के सहारे सामंजस्य संयोजन किया जाता है, इसी सामंजस्य को सादृश्य अथवा संतुलन को ही औचित्य कहा जाता है। यह सापेक्ष वस्तु है। नीम का चारा गाय के लिए असदृश और ऊँट के लिए सदृश है। अधिक आभूषणों का उपयोग ग्रामीण स्त्री के लिए उचित एवं नगर की स्त्री के लिए अनुचित है। इस प्रकार औचित्य एक विधेयात्मक तत्व सिद्ध होता है। यही समस्त सौन्दर्य का मूल है।'

काव्य में घटनाओं और पात्रों के संयोजन में स्वाभाविकता होने पर ही वह प्रेषणीय हो पाता है। अतः 'स्वाभाविकता' ही औचित्य है। उदाहरण के लिए, कवि पद्माकर की प्रसिद्ध पंक्ति–

'कूलप में केलि में कछास में कुंजन में
क्यारिन में कलिन कलीन किलकन्त है।
कहै पद्माकर परागन में, पौनहु में
पानन में पीकन पलाशन पगन्त है।'

यहाँ अतिम पंक्ति में 'पीकन' शब्द अलंकार के प्रयोग से बाध्य होकर किया है जिसका अर्थ औचित्यपूर्ण नहीं है। जिससे काव्य धूमिल होता है।

13.3 औचित्य का प्रयोजन

औचित्य के बिना कोई भी काव्यशास्त्रीय सिद्धान्त अधुरा है। औचित्य के बिना न तो कोई समझ ही अच्छी लगती है और न गुण ही। काव्य में किसी एक तत्व का महत्व नहीं होता है बल्कि सभी तत्वों के संतुलन, सामंजस्य और संगति में उचित भाव का होना आवश्यक है। यह उचित भाव कैसे, कहाँ और किस प्रकार होता है, यही औचित्य सिद्धांत बताता है। औचित्य द्वारा जीवन किस प्रकार सुन्दर और सामंजस्य

पूर्ण बनता है– यह व्यंजित होता है। काव्य को सामाजिक मर्यादा, जीवन मूल्य के संदर्भ में देखने की दृष्टि औचित्य द्वारा ही होती है। औचित्य ही काव्य के मूल सौन्दर्य का रक्षक है। औचित्य के अभाव में सौन्दर्य–सौन्दर्य नहीं रहता। काव्य में रस, गुण, अलंकार सभी का, उसी अवस्था में महत्व है जब ये सभी औचित्य के साथ हो। अतः काव्य को पढ़ने व समझने के लिए औचित्य सिद्धांत का ज्ञान आवश्यक है। काव्य में घटनाओं एवं पात्रों के आयोजन में स्वाभाविकता होने पर ही वह प्रेषणीय होता है। अतः उस स्वाभाविकता को जानना ही औचित्य सिद्धांत का उद्देश्य है।

13.4 औचित्य के भेद

आचार्य क्षेमेन्द्र के विचार से औचित्य बहुत व्यापक है। अतः उन्होंने काव्य के सूक्ष्मातिसूक्ष्म अवयव से लेकर उसके विशालतम रूप को ध्यान मे रखते हुए औचित्य पर प्रकाश डाला है, उनका कथन है–

> 'पदे वाक्ये प्रबन्धार्ये गुणेडलंकरणे रसे।
> क्रियायां कारके लिंग-वचने च विशेषणे।।
> उपसर्गे निपाते च काले देशे कुले व्रते।
> तत्वे सत्वेडप्यभिप्राये स्वभावे सार संग्रहे।।
> प्रतिभायामवस्थावां विचारे माम्न्यथाडशिषि।
> काव्यस्थागेषु च प्राहुरौचित्यं व्यापि जीवितम्।।

अर्थात औचित्य की व्याप्ति पद से लेकर विचार तक है। क्षेमेन्द्र के मत में औचित्य के भेद हैं–

पद, वाक्य, प्रबन्ध, गुण, अलंकार, रस, क्रिया, कारक, लिंग, वचन, विशेषण, उपसर्ग, निपात, काल, देश, कुल, व्रत, तत्व, सत्व, अभिप्राय, स्वभाव, सार–संग्रह, प्रतिभा, अवस्था, विचार, नाम, आशीर्वाद, काव्य के अन्य विविध अंग।

इन अट्ठाईस तत्वों को सुगमता की दृष्टि से निम्नलिखित चार भागों में विभक्त किया जा सकता है–

क) <u>शब्द</u>– पद, वाक्य, क्रिया, कारक, लिंग, वचन, विशेषण , उपसर्ग, निपात।

ख) <u>काव्यशास्त्रीय तत्व</u>– प्रबन्धार्थ, गुण, अलंकार, रस, सार संग्रह, तत्व, आशीष, काव्य के अन्य अंग।

ग) <u>चरित्र सम्बन्धी</u>– व्रत, तत्व, अभिप्राय, स्वभाव, प्रतिभा, विचार नाम।

घ) <u>परिस्थिति सम्बन्धी</u>– काल, देश, कुल, अवस्था।

उपर्युक्त अंगों के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि आचार्य क्षेमेन्द्र ने काव्य की विषयवस्तु और उसकी शैली–दोनों में ही औचित्य का विधान किया है। आचार्य क्षेमेन्द्र के दृष्टिकोण को सम्यक् रूप से समझने के लिए उनके द्वारा विवेचित औचित्य के कुछ उदाहरणों को जानते हैं।

पदगत औचित्य की विवेचना करते हुए उनका मानना है– 'सूक्ति में किसी विशेष पद का उचित प्रयोग इस प्रकार शोभाकारक होता है जैसे चंद्रमुखी युवती के मस्तक पर कस्तूरी तथा श्यामा के मस्तक पर चन्दन का तिलक।'

BHDC-106.indd 169 19-03-2021 08:51:38

जहाँ किसी पद के प्रयोग में विशेष औचित्य प्रगट होता है यथा–'हे देव ! युद्ध के समय तुम्हारी इस खड्गधारा में शत्रुओं के कुल डूब गए।'

इस प्रकार की प्रशंसा सुनकर भोली गुर्जर नरेश की पत्नी जंगल में चकित होकर जल की आशा से पति के कृपाण की ओर देखती है। यहाँ 'भोली' शब्द से अर्थ के औचित्य का चमत्कार उत्पन्न होता है।

इसके विपरीत कहीं-कहीं अनुचित शब्द के प्रयोग से काव्य-सौन्दर्य को क्षति पहुँचती है उदाहरणार्थ–

'सौन्दर्य रूपी धन के व्यय का कुछ सोच नहीं किया, महान क्लेश उठाया, स्वच्छंद और सुख से रहने वाले लोगों को चिन्ता के ज्वर से पीड़ित किया। 'विधाता ने इस तन्वी को जन्म देने में क्या प्रयोजन सोचा था।'

यहाँ आचार्य क्षेमेन्द्र का कथन है कि यहाँ 'तन्वी' शब्द किसी प्रकार के अधौचित्य के चमत्कार को प्रकट नहीं करता। उनके विचार से यहाँ 'सुन्दरी' शब्द का प्रयोग उचित था।

वाक्यगत : जहाँ वाक्य के प्रयोग द्वारा विशेष चमत्कार प्रकट होता है वहाँ वाक्यगत औचित्य है।

उदाहरणार्थ–

छीमियां दाना-रहित-सा साल पिछला दुबक गुजरा
और सूखे सन्तरे सा, यह नया आया है पास।

प्रबन्धगत औचित्य : किसी बात को सिद्ध करने के लिए किसी कथा-प्रबन्ध में बांधने के कारण विशिष्ट चमत्कार उत्पन्न होता है तो वहाँ प्रबन्धगत औचित्य होता है। यथा–

'प्रातधूप की जरतारी ओढ़नी लपेटे
अभी-अभी जागी
खुमार से भरी
नितान्त कुमारी घाटी'

अलंकार औचित्य : जहाँ अलंकार के प्रयोग द्वारा कोई वस्तु, भाव या विशेष रूप से प्रभावशील हो उठता है वहाँ अलंकार औचित्य होता है अर्थात् प्रतिपाद्य अर्थ के अनुरूप ही अलंकार का प्रयोग होना चाहिए। उदाहरणार्थ–

'सांझ के सेंदुर लिए आकाश में
सरक आया क्षुधित बादल-व्याल'

यहाँ रूपक अलंकार का चमत्कार उपरोक्त पंक्तियों में देखा जा सकता है।

रसौचित्य : औचित्य के द्वारा रस और अधिक आस्वादनीय बनकर सब हृदयों में व्याप्त हो जाता है। अर्थात् रस के प्रयोग से काव्य की पंक्तियाँ जब विशेष रूप से प्रभावशाली हो जाती हैं तो रसौचित्य होता है। उदाहरणार्थ–

BHDC-106.indd 170 19-03-2021 08:51:38

'दाने-दाने को तरस गयीं अगणित आँखें
कृमि कीट सदृश
फूटपाथों पर
मनु की प्यारी संतान मिट गयी बिलख-बिलख।'

करूण रस के चमत्कार से युक्त प्रस्तुत पंक्तियाँ हैं।

मधुर, तिक्त आदि रसों को चतुराई से मिलाने पर जिस प्रकार एक विचित्र आस्वाद उत्पन्न होता है, उसी प्रकार श्रृंगार आदि रसों को परस्पर समन्वित करने पर एक विलक्षण रसानुभूति होती है।

रसौचित्य के लिए ध्वनि सिद्धांतकार आनन्दवर्धन ने मुख्यतः दस नियम निर्धारित किए हैं–

1) शब्द और अर्थ का नियोजन औचित्यपूर्ण हो।

2) प्रबन्ध में सन्धि, घटना का प्रयोग रसानुकूल हो।

3) व्याकरण की दृष्टि से प्रयोग शुद्ध हो।

4) विरोधी रस के अंगों का वर्णन न हो।

5) गौण वस्तु, घटना, पात्र तथा वातावरण का इतना विस्तार न हो कि उसका मुख्य रस ही दब जाए।

6) अंगरस और अंगीरस का सम्बन्ध आपस में ठीक अनुपात में हो।

7) अन्य रसों की नियोजना में पारस्परिक अनुकूलता हो।

8) प्रबन्ध काव्य या नाटक में रस का प्रयोग उचित अवसर पर हो।

9) विभाव, अनुभाव, संचारी आदि के वर्णन में औचित्य की रक्षा की जाए।

10) काव्य में रस के विभिन्न अवयवों तथा विरोधी रसों का समन्वय उचित रूप से होना चाहिए, तभी रस निष्पति हो सकेगी।

देशकालगत औचित्य : जहाँ देश और काल के वर्णन से विषय में विशेष चमत्कार आ जाता हो, वहाँ देशकालगत औचित्य होता है–

'काले जंगल काले खेत, काली मिट्टी सांवरी
लुगड़ा छापेदार लाल, हंसली की चमके बीजरी
लहंगा स्याह कमर में पहिने, श्याम बरन की गूजरी।

गुणौचित्य : काव्य में विभिन्न गुणों का समन्वय रस के अनुकूल होना चाहिए। जैसे– ओज का वीर रस में, माधुर्य का श्रृंगार और करूण में।

संघटनौचित्य : संघटना या रचना का उद्देश्य रस है। अतः उसमें विभिन्न तत्वों का नियोजन रस के अनुकूल होना चाहिए। इसके चार नियामक है–

क) संघटना रसानुकूल हो।

ख) पात्र की प्रकृति, स्थिति तथा मानसिक दशा के अनुसार इसकी योजना हो।

BHDC-106.indd 171 19-03-2021 08:51:38

ग) प्रतिपाद्य विषय के अनुकूल हो।

घ) काव्य की प्रकृति के अनुकूल हो।

बिम्बगत औचित्य : जहाँ बिम्बों के संयोजन से उनके औचित्य द्वारा काव्य में विशेष चमत्कार आ जाता है, वहाँ बिम्ब औचित्य माना जाता है यथा–

नरवत-वेणी में रहे उलझे जुही के फूल
बहाये कुछ लहरियों के साथ दूर अकूल

विचारगत औचित्य : जहाँ किसी विचार के कारण काव्य में विशेष चमत्कार आता है वहाँ विचारगत औचित्य होता है।

रीति औचित्य : 'रीति का प्रयोग भी उचित रूप से अर्थात् वक्ता, रस अलंकार तथा काव्य के स्वरूप के अनुकूल होना चाहिए।

आनंदवर्धन ने औचित्य के मुख्यतः छः प्रकार बताए हैं जिनमें– रस औचित्य , अलंकारौचित्य, गुणैचित्य, संघटनौचित्य, प्रबंधौचित्य तथा रीति औचित्य है।

कुन्तक एवं महिम भट्ट ने भी इसका वर्णन किया है। कुन्तक के अनुसार औचित्य वह है 'जिसके द्वारा स्वभाव का महत्व पुष्ट होता हो अथवा जहाँ वक्ता या श्रोता के अति स्वाभाविक सौन्दर्य के कारण वाच्य वस्तु आच्छादित हो जाती हो। वह औचित्य है।'

दूसरे शब्दों में किसी वस्तु का स्वाभाविक सौंदर्य का वर्णन ही औचित्य है। महिमभट्ट ने व्यक्ति-विवेक में औचित्य के दो भेद किए–शब्दौचित्य और अर्थौचित्य। क्षेमेन्द्र ने 'औचित्य-विचार' लिखकर उसे काव्य की आत्मा माना एवं अतयंत व्यापक रूप दिया।

औचित्य के ये प्रमुख भेद आज के समय में आधुनिक काव्य के सन्दर्भ में अधिक उपयोगी है। काव्य की चाहे कोई भी विधा हो, काव्य की कोई भी विशेषता या गुण हो, उसके संपादन में, तथा उसे प्रभावी बनाने में औचित्य का निर्वाह बहुत आवश्यक है। इसीलिए पाश्चात्य आचार्यों ने भी औचित्य के महत्व को स्वीकारा है। अरस्तू ने दृश्य, घटना, काल, भाषा में औचित्य को महत्वपूर्ण माना है। लोजाइनस ने शब्द प्रयोग के औतचत्य को काव्य का प्राण कहा है। होरेस, दान्ते, पोप, रिचर्ड्स मैथ्यू आर्नल्ड सभी ने काव्य में औचित्य को अपने-अपने ढंग से स्वीकारा है।

13.5 सहृदय की अवधारणा और औचित्य विवेचन

भारतीय काव्यशास्त्र की यह मान्यता सामान्यतः स्वीकार कर ली गई है कि काव्य का पाठ करने तथा उसे बोधगमय रूप में स्वीकार करने के लिए पाठक को सहृदय होना चाहिए। आचार्य शुक्ल कहते हैं कि बिना परिचय के प्रेम कहाँ? इसी बात को आगे बढ़ाते हुए कहा जा सकता है कि यदि पाठक में ग्रहीता का भाव नहीं होगा तब वह काव्यास्वाद भी नहीं कर सकेगा और रचनाकार से तादात्म्य भी स्थापित नहीं कर सकेगा। इस अर्थ में रचनाकार, रचना तथा पाठक के बीच एक तादात्म्य होना आवश्यक है, तब यह स्पष्ट है कि पाठक के सहृदय होने पर ही रचना से उसका सरोकार बनेगा और तभी रचना की मूल प्रवृत्ति की पहचान संभव हो सकेगी। अब प्रश्न यह उठता है कि सहृदय की अवधारणा मूलतः रस सिद्धांत तथा उससे संबंधित साधारणीकरण की अवधारणा से संबंधित है तब फिर औचित्य सिद्धांत के विवेचन के संदर्भ में सहृदय की अवधारणा की चर्चा किस रूप में और क्यों होनी चाहिए? इस

BHDC-106.indd 172 19-03-2021 08:51:39

प्रश्न का स्पष्ट उत्तर यह होगा कि औचित्य मूलतः तर्कजन्य कारण से संबंधित है। इसी अर्थ में औचित्य को सृजन के साथ जोड़कर देखा जाता है और यही औचित्य विवेचन वास्तव में औचित्य सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य क्षेमेंद्र को इस बात के लिए विवश करता है कि वे औचित्य के एक भेद के रूप में रसौचित्य का भी वर्णन करते हैं। औचित्य को अंगी तथा रस को अंग मानकर वे रस की महत्ता को रेखांकित करने के साथ-साथ औचित्य को मूल और वास्तविक प्रयोजन के रूप में स्थापित करते हैं। जैसा कि आप जानते हैं कि साहित्य में सबसे पहले रचना के आधार पर ही पाठक तथा आलोचक के मत को निर्धारण होता है इस दृष्टि से सृजन, ग्रहण (पाठ) तथा आलोचना। इस क्रम में रचना को ही सर्वाधिक महत्व दिया जाता है। रस को औचित्य के साथ जोड़कर देखने पर औचित्य सिद्धांत की स्वीकार्यता और महत्ता अधिक बढ़ जाती है। औचित्य सम्प्रदाय के प्रवर्तक क्षेमेंद्र जहाँ औचित्य को अंगी तथा रस को उसका आंग मानते हैं वहीं अभिनवगुप्त औचित्य को रस का साधक मानते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि आचार्य अभिनवगुप्त की दृष्टि में रस अंगी है– वही प्रमुख है, औचित्य तो बस उसका एक साधन है। इससे इतना तो स्पष्ट हो ही जाता है कि सहृदय की अवधारणा औचित्य से निरपेक्ष नहीं है, यही बात औचित्य के संदर्भ में कही जा सकती है। इस प्रकार से जुड़ी सहृदय की अवधारणा का विवेचन आवश्यक है।

13.6 औचित्य विवेचन की समस्याएँ

औचित्य जीवन के विभिन्न आयामों पर एक महत्वपूर्ण विचारणीय प्रश्न है। किसी भी कार्य के औचित्य के बिना उस कार्य को करना अनुचित कहा जाता है। यही औचित्य काव्यसृजन, साहित्य विमर्श तथा लोकजीवन के साथ-साथ साहित्य की प्रासंगिकता आदि विभिन्न दृष्टियों से महत्वपूर्ण विषय बन जाता है। डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी, आचार्य क्षेमेंद्र के औचित्य विवेचन को इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं, ''पर परोपकारी शब्दार्थमय काव्य में अलंकार बाह्य शोभाकारी होने से कट आदि की भांति अंततः अलंकार ही है और गुण भी श्रुत, सत्य, शील आदि की तरह अर्जित हैं, सहज नहीं, अतः वे भी गुण ही है। पर जहाँ तक औचित्य का संबंध है, वह काव्य का स्थिर और अविनश्वर जीवित है जिसके बिना काव्य निर्जीव है।'' आचार्य क्षेमेंद्र का यह कथन निर्विवाद रूप से स्वीकार्य नहीं है, इसे सहज और स्वाभाविक रूप से ग्राह्य नहीं कहा जा सकता है। इसका मुख्य कारण यह है कि औचित्य है। काव्य का जीवित है, गुण तथा अलंकार नहीं। यह मान्यता स्वीकार करने पर रीति और अलंकार का महत्व तो कम हो ही जाता है अपितु साधन को साध्य मानने की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। शरीर को आत्मा नहीं माना जा सकता है। अलंकार एवं रीति को भी काव्यात्मा मानना औचित्यपूर्ण नहीं होगा।

'औचित्य रस सिद्ध काव्य का जीवित है'– यह मानने वाले आचार्य क्षेमेंद्र रस को विरोधी तो नहीं माने जा सकते किंतु यह प्रश्न तो उठता ही है कि यदि औचित्य जीवित है तो फिर रस की स्थिति क्या है? क्या रस को जीवित नहीं माना जा सकता?

यही नहीं आचार्य क्षेमेंद्र वक्रोक्ति एवं ध्वनि के विषय में औचित्य चिंतन में अपना स्पष्ट मत नहीं व्यक्त करते, तब क्या यह मान लिया जाए कि क्षेमेंद्र का मत औचित्य चिंतन को रस के साथ जोड़कर ही देखने के लिए उपयुक्त है। स्पष्ट रूप से यह देखा जा सकता है कि रस पर अधिक बल देना तथा रस की निर्मिति के साथ औचित्य की संबंध स्थापना वास्तव में इस बात पर ही केंद्रित है कि यदि रसौचित्य स्थापित हो जाता है तब फिर ध्वनि तथा वक्रोक्ति के साथ औचित्य की सहधर्मिता स्थापित करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी।

BHDC-106.indd 173 19-03-2021 08:51:39

औचित्य वास्तव में तर्क पद्धति से जुड़ा हुआ मामला है। औचित्य काव्यालोचन के लिए अत्यंत विचारणीय चिंतन-बिंदु है। जिस प्रकार काव्यात्मा का प्रश्न साहित्य सृजन से जुड़ा हुआ है और रस को ही कविता या काव्य की मूल सत्ता अथवा मूल तत्व मानना उपयुक्त माना जाता है, उसे ग्रहणशीलता के स्तर पर ग्राहक या भावक (पाठक) को ग्राह्य बनाने के लिए उसे सहृदय होना उपयुक्त माना जा सकता है। उसी प्रकार काव्यालोचन के प्रसंग में औचित्य के महत्व को स्वीकार कर लेना ही उपयुक्त कहा जा सकता है।

13.7 पाश्चात्य चिंतन के आलोक में औचित्य विवेचन

पिछली चर्चाओं से यह बात तो स्पष्ट हो ही गई है कि औचित्य जीवन के विभिन्न पक्षों में महत्वपूर्ण तत्व तो है ही साहित्यिक मूल्यांकन के लिए भी अत्यंत विचारण ीय है। अब यह समझना उपयोगी होगा कि पाश्चात्य साहित्य चिंतन में औचित्य को किस रूप में देखा-समझा गया है या यों कहें कि भारतीय औचित्य सिद्धांत से मिलता जुलता क्या पश्चिम में भी कोई सिद्धांत है या पश्चिमी साहित्य चिंतकों ने औचित्य सिद्धांत जैसा कोई मत प्रस्तुत किया है?

औचित्य के दो पक्ष होते हैं– विषयगत औचित्य तथा पद्धतिगत औचित्य विषयगत औचित्य में जहाँ वर्ण्य विषय या अन्तर्वस्तु के सन्दर्भ में औचित्य का निर्धारण किया जाता है वहीं पद्धतिगत औचित्य में रचना में प्रयुक्त शिल्प विधान या शैली और भाषिक संरचना के औचित्य का विवेचन किया जाता है। इस दृष्टि से देखें तो आई. ए. रिचर्ड्स के मूल्य सिद्धांत तथा संप्रेषण सिद्धांत दोनों में ही औचित्य की चर्चा की गई है। जब रिचर्ड्स यह कहते हैं कि कविता का मूल्य इस बात में है कि वह मानसिक चिकित्सा (Mental Theropy) करती है तब वे काव्य के औचित्य को ही रेखांकित कर रहे होते हैं। इसी प्रकार जब वे संप्रेषण के माध्यम की बात करते हैं तब वास्तव में पद्धतिपरक औचित्य की ही चर्चा करते हैं। इसी प्रकार काव्यभाषा के संदर्भ में जब वे भाषा के रागात्मक प्रयोग (Emotine use of language) की बात करते हैं तब उनका आदाय स्पष्ट रूप से यही होता है कि कविता में भाषा के रागात्मक प्रयोग का ही औचित्य होता है। उनके ही द्वारा व्याख्यायित भाषा के वैज्ञानिक या सन्दर्भगत प्रयोग का कोई औचित्य नहीं होता।

टी. एस. इलियट का वस्तुनिष्ठ सह संयोजन (Objective correlative) सिद्धांत वास्तव में पूर्णतः औचित्य विवेचन पर ही आधारित है। जब वे 'हेमलेट' में वस्तुनिष्ठ सह-संयोजन का अभाव देखकर शेक्सपीयर की नाटकीय सफलता का रेखांकण करते हैं तब पात्र तथा नाटकीय प्रस्तुतीकरण में कथा विन्यास तथा उसके घटनाक्रम के विन्यास में सुसंगति नहीं है। यह वास्तव में औचित्य विवेचन ही है।

मार्क्सवादी विचारधारा रचना का महत्व इस बात में मानती है कि रचना सर्वहारा वर्ग में बूर्जुआ वर्ग के प्रति विद्रोह की भावना उत्पन्न करे। शोषण के विरुद्ध विद्रोह ही मार्क्सवाद का मूलमंत्र है। इसीलिए ट्राटस्की मानते थे कि कला हथौड़ा है। यथार्थ की अभिव्यक्ति मार्क्सवादी चेतना का ऐसा तत्व है जिसको रचना का मूल्यांकन करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। यह औचित्य निर्धारण ही साहित्यिक मूल्यांकन का मूलाधार है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि पश्चिमी चिंतन में भी औचित्य विवेचन हुआ है। यह बात अलग है कि वहाँ इसके निर्धारण एवं प्रस्तुतीकरण का तरीका भिन्न रहा है।

BHDC-106.indd 174 19-03-2021 08:51:39

13.8 सारांश

आचार्य क्षेमेन्द्र ने काव्य रचना में छंद, अलंकार, रस आदि सभी तत्वों के औचित्य को स्वीकारा है। अनुचित अलंकार प्रयोग, अनुचित रीति, अनुचित रस एवं अर्थ, ये सभी काव्य के सौष्ठव को नष्ट कर देते हैं। अतः आचार्य क्षेमेन्द्र ने औचित्य मत का प्रतिपादन करने के साथ ही उसे काव्य की आत्मा भी स्वीकारा।

आचार्य क्षेमेन्द्र ने माना कि रस सिद्ध काव्य की स्थिरता औचित्य तत्व पर ही निर्भर करती है अतः औचित्य ही प्राण है जब शरीर में प्राण है तभी अलंकार आदि की शोभा होगी, तभी रस का संचार हो सकता है, किन्तु प्राणों से रहित होने पर कोई भी विशेषता नहीं रह जाती है। अतः मूल तत्व औचित्य है जिससे काव्य में विविध गुणों एवं चमत्कार का विकास होता है।

यह औचित्य का सिद्धांत अत्यंत सरल और स्पष्ट है। सामान्य अनुभव के अनुसार इसे संयोजन का भाव भी कहा जा सकता है क्योंकि जब तक किसी वस्तु में उसके सब अंग उचित रूप से संयुक्त नहीं होंगे, तब तक उसमें पूर्णता नहीं आ सकती। एकत्व की प्रतिष्ठा नहीं हो सकती।

इस एकत्व के विचार से औचित्य का सिद्धांत इसीलिए भी महत्वपूर्ण है कि इस सिद्धांत का प्रयोग तो किसी भी वस्तु के उसके अपने सब अंगों के सम्बन्धों का परीक्षण करने तथा उस वस्तु के साथ अन्य वस्तुओं के पारस्परिक परीक्षण के लिए भी किया जाता है। अतः औचित्य का प्रधान तत्व गुण है अर्थात् कवि को, प्रत्येक तत्व के उचित प्रयोग का ध्यान रखना चाहिए।

13.9 अवधारणात्मक शब्द

औचित्य सम्प्रदाय : प्रस्तुत इकाई में औचित्य का विवेचन काव्य के संदर्भ में किया गया है। काव्य के संदर्भ में आचार्य क्षेमेंद्र द्वारा प्रवर्तित सिद्धांत औचित्य सम्प्रदाय के रूप में जाना जाता है। क्षेमेंद्र के अनुसार औचित्य काव्य का स्थिर और अविनश्वर जीवित है जिसके बिना काव्य निर्जीव है। जो जिसके अनुरूप है, वही उचित है और इसी उचित का भाव औचित्य है।

सहृदय की अवधारणा : भारतीय काव्यशास्त्र का एक महत्वपूर्ण सम्प्रदाय है रस सम्प्रदाय। रस की निष्पत्ति की व्याख्या के प्रसंग में यह माना जाता है कि सहृदय को ही रसानुभूति होती है। वही रसग्रहण कर सकता है। वास्तव में वही रस भोक्ता है। 'ध्वन्यालोक' की प्रथम कारिका में आनंनवर्धन ने सहृदय का प्रयोग करके इसे अत्यधिक लोकप्रिय बनाया। भट्टनायक, वामन आदि आचार्यों ने भी सहृदय शब्द का प्रयोग किया है। वाल्मीकि रामायण के अयोध्या काण्ड में भी 'सहृदय' शब्द का प्रयोग हुआ है जहाँ उसका अर्थ है 'आनन्द भोक्ता'।

रसौचित्य : आचार्य क्षेमेंद्र ने रसौचित्य को औचित्य का एक प्रकार माना। इसको औचित्य का अंग माना गया है। औचित्य अंगी है अर्थात् औचित्य ही जीवित है, रस उसका साधन। यद्यपि अभिनवगुप्त इस मत से सहमत नहीं हैं। रस के प्रयोग से जब काव्य में प्रभावोत्पादकता बढ़ जाती है तब उस अवस्था को रसौचित्य कहा जाता है।

अलंकार औचित्य : जब अलंकार के प्रयोग द्वारा काव्य सौंदर्य में इस प्रकार की वृद्धि हो कि वह प्रतिपाद्य अर्थ को अत्यधिक प्रभावशाली ढंग से स्पष्ट करे तब वह स्थिति अलंकार औचित्य कहलाती है।

BHDC-106.indd 175 19-03-2021 08:51:39

13.10 उपयोगी पुस्तकें

भारतीय काव्यशास्त्र, योगेन्द्र प्रताप सिंह, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

भारतीय काव्यशास्त्र के नए क्षितिज, राममूर्ति त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

संस्कृत आलोचना, बलदेव उपाध्याय, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ।

भारतीय काव्यशास्त्र, निशा अग्रवाल, लोकभारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद।

13.11 बोध प्रश्न

1) औचित्य के भेदों की चर्चा कीजिए।

2) औचित्य का अर्थ एवं स्वरूप स्पष्ट कीजिए।

3) औचित्य विवेचन की समस्याओं की चर्चा कीजिए।

4) सहृदय की अवधारणा एवं औचित्य विवेचन पर प्रकाश डालिए।

5) पश्चिमी चिंतन के संदर्भ में औचित्य विवेचन की चर्चा कीजिए।

13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1) देखिए भाग 13.4

2) देखिए भाग 13.2

3) देखिए भाग 13.6

4) देखिए भाग 13.5 तथा भाग 13.8

5) देखिए भाग 13.7

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY